ISSN - 2348-2397
UGC CARE LISTED JOURNAL
IIS
शोध सरिता
January-March, 2021
Vol. 8, Issue 29
Page Nos. 114-117
AN INTERNATIONAL BILINGUAL PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

आंचलिक उपन्यासों में विश्लेषित स्त्री चरित्र

पूनम सिंह*
प्रो0 देवेन्द्र नाथ सिंह**

शोध सारांश

मनुस्मृति की यह चिर–परिचित श्लोक – **''यत्र नार्यस्तु पूज्यंते स्मंते पत्र देवताः,** इस बात की ओर संकता करता है कि प्राचीन काल भारतीय महिलाओं का स्वर्णिम काल था। पुरूष प्रधान व्यवस्था होने के उपरान्त भी महिलाओं का समाज में सम्मान था, प्रतिष्ठा थी और उन्हें आगे बढ़ने की पूरी स्वतंत्रता थी। अपनी अगाध प्रतिभा व आध्यात्मिक ज्ञान से वे समाज को यह बताने में सक्षम हुई कि वे पुरूषों किसी भी प्रकार कम नहीं हैं, परन्तु प्राचीन काल से लेकर अब तक पुरूष प्रधान व्यवस्था चली आ रही है और पहले की अपेक्षा आज यह व्यवस्था अत्यन्त व्यापक व सबल रूप से स्त्रियों पर हावी होती दिखाई पड़ती है। पुरूष जहाँ से जीना शुरू करता है, स्त्री को वह शुरूआती जमीन कभी प्राप्त नहीं हुई बल्कि इतिहास उठाकर देखें तो पाएँगें कि पुरूष ने वाह्य जगत में स्त्री को अविकसित चरण में ही रखा हुआ था, यह तो स्त्री ही है जिसने आधुनिक युग में संघर्ष करते हुए अपने आपको विकसित किया। अंचल में स्त्रियों की दशा में बहुत व्यापक रूप में परिवर्तन देखने को मिलता है। जहाँ एक ओर स्त्री आंचलिक क्षेत्रों में शोषिता के रूप में दिखाई देती है वहीं विभिन्न उपन्यासों के द्वारा स्त्री का सशक्त चरित्र हमें देखने को मिलता है।

Keywords : आंचलिक उपन्यास, भारतीय ग्रामीण, फणीश्वर नाथ रेणु, उदय शंकर भट्ट, लोक–परलोक, बलचनमा, राही मासूम रज़ा।

यह सर्वविदित तथ्य है कि सबसे पहले स्त्री ने ही पुरूष को घर बनाकर रहने की प्रेरणा दी, परन्तु आज उसी घर में स्त्री को मानिसक, शारीरिक, भावनात्मक आदि विभिन्न रूपों में घरेलू हिंसा का शिकार होना पड़ रहा है। परिणामस्वरूप स्त्री का अस्तित्व न केवल परिवार में बल्कि परिवार के बाहर भी कमजोर हुआ है। पुरूष पहले भी स्त्री पर अपना अधिकार चाहता था और आज भी वह यही चाहता है। यही कारण है कि वह स्त्री को अपने अधीनस्थ स्थिति में बनाये रखने के लिए संस्कृति, जाति, धर्म, मूल्यों, परम्पराओं आदि का प्रयोग उसके शोषण के रूप में करता है। प्रत्येक शासित शोषित नहीं होता, परन्तु प्रत्येक स्त्री शासित भी है और शोषित भी। स्त्री की यह दशा देखते हुए **जयशंकर प्रसाद** की यह विख्यात पंक्तियाँ व्यंग्य की प्रतीत होती हैं–

''नारी ! तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास–रजत–नग पगतल में,
पीयूष–स्रोत–सी बहा करो जीवन के सुन्दर समतल में''

उदयशंकर भट्ट द्वारा रचित उपन्यास 'सागर लहरें और मनुष्य' में संघर्षरत मछुआरों की कहानी है। इस उपन्यास में बम्बई के निकट रहने वाली मछुआ लड़की रत्ना की कहानी हैं। रत्ना का चरित्र एक महत्वकांक्षी लड़की के रूप में सामने आता है। वह मछुआ जीवन से ऊब कर अपने जीवन में परिवर्तन लाना चाहती है। वह ऐसे व्यक्ति की तलाश में रहती है जो उसकी आवश्यकताओं को पूरा कर सके। वह मणिक जैसे व्यक्ति के बहकावे में आ जाती है। जो उसे धन कमाने का साधन बनाना चाहत है। रत्ना का चरित्र विकासशील है, क्योंकि जिन्दगी के उतार चढ़ावों के बीच जीवन के परिवर्तनो को झेलती हुई वह जीवन में आगे बढ़ती है। यहां रत्ना का चरित्र मछुआ जीवन के सुख–दुख, हास्य–अश्रु, आनन्द–पीड़ा को अभिव्यक्त करती है। ''रत्ना एक ऐसी स्त्री है जो अपने चरित्र की आन्तरिक शक्ति, विषम परिस्थितियों में जूझने का साहस, अपनी महत्वकांक्षाएं, विद्रोही स्वभाव और दृढ़ संकल्प के कारण परम्परागत जीवन की संकीर्ण सीमाओं को तोड़ डालती है।''[1] इसी उपन्यास का दूसरा स्त्री चरित्र है सारिका। सारिका मध्यवर्गीय परिवार से सम्बन्ध रखने वाली लड़की व रत्ना की सहेली है। सारिका में हमें शक्ति सामर्थ्य अधिक दिखाई देता है। वह रत्ना की तुलना में अधिक समझदार है। सारिका का चित्रण भट्ट जी ने सुसंस्कृत व

*(शोध छात्रा) डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ
**(शोध पर्यवेक्षक) गुरू घासीदास केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ़

सुशिक्षित स्त्री के रूप में किया है।

उदयशंकर भट्ट द्वारा रचित उपन्यास 'लोक–परलोक' सामाजिक यथार्थ की भूमि पर लिखा गया एक सफल आंचलिक उपन्यास है। उपन्यास की नायिका चमेली विशुद्ध भारतीय नारी का प्रतीक बनकर सामने आती है। चमेली के चरित्र के माध्यम से लेखक ने यत्र–तत्र उपन्यास में नारी चेतना को भी दर्शाया है। चमेली को उसके मां–बाप द्वारा छोटी सी आय में ही पैंतीस–चालीस वर्ष के विधुर के हाथों बेच दिया जाता है। चमेली विवाह के पश्चात् कई गलत कार्यों में पड़ जाती है। अपने पति की मृत्यु के पश्चात् उसे अपने पिछले जीवन से पछतावा होता है। चमेली पाश्चाताप के कारण अपने जीवन को लोकसेवा, बीमार व दुखियों की सेवा में लगा देती है। उसकी मृत्यु के पश्चात् सभी लोगो के मन में उसके प्रति श्रद्धा का भाव जाग्रत हो जाता है। मन्दिर, मठ तथा धार्मिक स्थानो पर स्त्री के प्रति होने वाले शोषण का चित्रण भट्ट जी ने चमेली के माध्यम से किया है। कितना भी पवित्र व्यक्ति क्यों न हो यदि वह प्रयत्न व संयम से पाश्चाताप करे तो उसका उद्धार अवश्य हो जाता है। चमेली जैसे स्त्री चरित्र के माध्यम से उपन्यासकार लोगों तक यह बात पहुंचाता है।

भारतीय ग्रामीण समाज में स्त्री प्रमुख रूप से पत्नी, बहन व पुत्री की भूमिका निभाती है। आंचलिक उपन्यासों में स्त्री चरित्र व दशा के भिन्न–भिन्न रूप हमारे सामने आते हैं। गांव में सामान्यतः लोग पुत्र की ही कामना करते है। पुत्री के जन्म की अपेक्षा पुत्र के जन्म पर लोगों को अधिक प्रसन्नता होती है। यदि पुत्र की चाह रखने वाले परिवार में पुत्री का जन्म हो गया तो वहां प्रसन्नता के स्थान पर दुख व विशाद का वातावरण बन जाता है। उत्तर प्रदेश के कछार अंचल पर आधारित उपन्यास 'जल टूटता हुआ' में शारदा वहां के परिवारों की लड़कियों को परिवार में स्थिति पर विचार करती हुई कहती है– ''इस गांव में लड़कियों को कौन खातियाता है। वे तो पांव तले की जूती है– हे राम लड़की का जीवन भी क्या नरक का जीवन है? लड़के दूध पियेंगे, घी खायेंगे, मिठाई खायेंगे, सामने छोटी–छोटी लड़कियां उन्हें टुकुर–टुकुर तांकती रहेगी। बाद में तो तांकना भी छोड़ देती है क्योंकि लड़के व अपने में वे इस अन्तर को स्वाभाविक मान लेती है। हे ईश्वर! तूने लड़की जाति पैदा ही क्यों की? लड़का पैदा होने पर मां को एक माह तक अच्छा भोजन व दूध पीने को मिलता है मगर लड़की पैदा होने पर पन्द्रह दिन तक। इतना बड़ा अपमान नारी जाति का लड़का पैदा होने पर सोहर गाया जाता है, लड़की पैदा होने पर मातम मनाया जाता है... इतना बड़ा अपमान लड़कियों का जैसे वे कीड़ा मकोड़ा हो।[2]

माना जाता है कि पुत्री के विवाह व पालन पोषण के लिए बहुत अधिक धन की आवश्यकता होती है। यदि किसी परिवार में लड़की पैदा हो गई तो उस परिवार की एक पीढ़ी तो उसके विवाह की चिन्ता में ही सूख जाती है। आंचलिक उपन्यासों में यह समस्या व स्त्री की दशा हमें देखने को मिलती है। वस्तुतः परिवार में स्त्री की उपेक्षा का कारण उसके लिए धन की आवश्यकता ही है। यही समस्या हमें 'आधा गांव' में दिखाई देती है। ''जब फुस्सू मियां की पत्नी सकीना एक के बाद एक पुत्रियों को ही जन्म देती है तो फुस्सू का मुंह लटक जाता है और रब्बन बी हाथ उठा–उठाकर सकीना को कोसने लगती। लड़की पे लड़की पैदा किये जा रही हो बाकी ई घर में रोकड़ ना धरा है। सकीना इन कोसनों की पी जाती।''[3]

विवाह के उपरान्त स्त्री परिवार में पत्नी के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है परन्तु फिर भी पुरूष की अपेक्षा उसे निम्न ही समझा जाता है। स्त्री को सदैव अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं व आशाओं की पति व परिवार के लिए समर्पित करना पड़ता है। ग्रामीण परिवारों में छोटी–छोटी बात पर पुरूष द्वारा स्त्री पर हिंसा व दुर्व्यवहार करना आम बात समझी जाती है। आंचलिक उपन्यासों में पत्नी के पति द्वारा पीटे जाने की अनेक घटनाएं मिलती हैं। 'आधा गांव' में रज्जू अपने अब्बा द्वारा अपनी अम्मा को पीटे जाने की सूचना नौशाब को देते हुए कहता है– ''एक बाजी! अब्बा अम्मा को मार रहे।'' ''हट!'' ''नहीं, अल्ला–कसम! चलके देख लो। किवाड़ बंद किये हैं और चढ़के बैठे हैं अम्मां पर। और जानी काका कह रहे और अम्मा भी मार भिनभिना रही।''[5]

स्त्रियों के लिए विवाह जैसी समस्या से एक के बाद एक कई अन्य समस्याएं भी उत्पन्न हो जाती है। विवाह से सम्बन्धित ऐसी ही एक समस्या है दहेज प्रथा। गांवों में लोग पुत्री के जन्म का शोक इसलिए ही मनाते है कि वह पराया धन है और उसके विवाह के लिए मोटा दहेज एकत्र करना पड़ेगा। दहेज प्रथा के प्रचलन का ही दुष्परिणाम है अनमेल विवाह। जो व्यक्ति अपनी कन्या के विवाह में आवश्यक धन दे पाने की स्थिति में नहीं होता, उसे अपनी पुत्री को विवाह अनुपयुक्त वर से करना पड़ता है। कई आंचलिक उपन्यासों में हमें यह स्थिति देखने को मिलती है। ''पानी के प्राचीर' में उत्तर प्रदेश के कछार अंचल का बैजू अपनी बहन गेंदा का विवाह एक बूढ़े व्यक्ति से कर देता है।''[6] उदयशंकर भट्ट द्वारा रचित 'लोक परलोक' में उत्तर प्रदेश के पद्मपुरी ग्राम की चमेली तेरह चौदह वर्ष की आयु मे ही पैतींस चालीस साल के मुनीम के हाथों बेच दी जाती है।''[7]

ऐसा नहीं है कि ग्रामीण स्त्री किसी एक विशेष जाति व धर्म में ही शोषित व पीड़ित होती है। प्रत्येक जाति, धर्म व सम्प्रदाय में स्त्री की स्थिति व समस्याएं लगभग एक सी पाई जाती है। मुसलमानों में भी विधवा स्त्रियों की स्थिति हिन्दू विधवाओं के समान ही है। मुस्लिम समाज में भी विधवा स्त्री को अच्छा खाने पहनने, उत्सवों में शामिल होने, अन्य स्त्रियेां की तरह आभूषण धारण करे व शुभ स्थलों पर जाने की अनुमति नहीं दी जाती है। उन्हें इन सभी कार्यों के लिए अपुशगुनी समझा जाता है। ''आधा

गांव'' में हुसैन अली मियां की बहन उन्मुल हबीबा तो कोई बीस साल से सफेद कपड़े पहन रही थी। शादी के तीसरे दिन ही वह बेवा हो गई थी। उसकी और आसिया की शादी में तीन दिन का हेर फेर था। अब आसिया माशाअल्लाह छः बच्चों की मां थी। और उन्मुल हबीबा शादी ब्याह के मौको पर अछूत हो जाती थी। दुल्हन के कपड़ो को वह छू नहीं सकती थी। यहां तक की दूसरों की शादी के गीत सुनते–सुनते उसके बाल बे वक्त सफेद हो गये थे।''[8] भले ही आज हमारे समाज में विधवा विवाह का प्रचलन हो गया हो परन्तु ग्रामीण विधवा स्त्री को आज भी अन्य स्त्रियों के समान प्रतिष्ठा, सम्मान व अधिकार प्राप्त नहीं हो सका है।

अंचल क्षेत्रों में स्त्री की इन समस्याओं की तरह ही एक अन्य समस्या भी हमें देखने को मिलती है। हिन्दू व मुस्लिम समाज में ग्रामीण स्त्रियों के लिए पर्दा प्रथा आज भी नारियों की प्रगति में बाधा बनी हुई है। स्त्री समाज व परिवार का निर्माण करती हैं। वह अत्यन्त शील, धैर्यवान व प्रेम से ओतप्रोत होती है परन्तु पुरूष समाज ने उसकी प्रगति के मार्ग में कई अवरोध उत्पन्न किये है। पर्दा प्रथा हमारे समाज में बहुत पहले से विद्यमान हैं और आज भी अंचल क्षेत्रों में यह दिखाई देती है। ''आधा गांव'' उपन्यास में घर की चार दीवारियों के मध्य वायुयान के आंगन में ऊपर आते ही घर में उपस्थित मुसलमान स्त्रियां दौड़कर कमरों में घुस जाती हैं और अपने आंचल से मुंह को ढ़क लेती हैं क्योंकि वे समझती है कि आकाश में उड़ते वायुयान से उन्हें कोई देख सकता है।''[9]

हिन्दी के आंचलिक उपन्यासकारों ने भारतीय ग्रामीण समाज के स्त्री सम्बन्धी मूल्यों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। जिसके अन्तर्गत प्रमुखतः स्त्री की स्वयं के सम्बन्ध में परिकल्पना, स्त्री के सम्बन्ध में ग्रामीण जनता की परिकल्पना एवं स्वयं उपन्यासकार की स्त्री के सम्बन्ध में परिकल्पनाएं सम्मिलित हैं। आंचलिक उपन्यासों में उपन्यासकारों ने स्त्री चरित्र के कई रूपों को उजागर करने का प्रयास किया है। एक तरफ जहां ग्रामीण स्त्री का सशक्त चरित्र दिखाई देता है। तो दूसरी ओर स्त्री अपने अधिकारों से वंचित व शोषित दिखाई देती है। ग्रामीण समाज में स्त्री परिवार से लेकर समाज तक मनुष्य द्वारा उपेक्षित व निम्न स्तर का जीवन जीने के लिए बाध्य है। स्त्री के सतीत्व की रक्षा को लेकर कई आदर्शात्मक परिकल्पनाएं सामने आती है। हम कई आंचलिक उपन्यासों में देखते हैं कि स्त्री स्वयं अपने सतीत्व की रक्षा करने के लिए अपने प्राणों तक का उत्सर्ग कर देती है। बिहार, अंचल पर आधारित उपन्यास '' बचलनमा' में गांव के मुखिया के द्वारा घर पर काम करने आई हुई रेबनी मुखिया द्वारा अपने सतीत्व को लूटने की चेश्टा का विरोध करती है और जब कामुक जमींनदार उस पर नियन्त्रण नहीं कर पाता और रेबनी को नीचे गिराकर उसका बलात्कार करना चाहता है तो रेवनी अपने सतीत्व की रक्षा के लिए उससे मुकाबल करती है और अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग करके जमींदार के सभी प्रयासों को विफल कर देती है।[10] प्राचीनकाल से स्त्री अपनी कोमलतम भावनाओं व औरों के लिए अपने जीवन को समर्पित कर एक प्रेरणादायी स्रोत बन गई। मातृत्व की पीड़ा को सुखद मानकर स्त्री ने इस संसार का सृजन किया और विश्वमंगल की कामना रखी तथा वह त्याग, बलिदान सेवा ओर प्रेम का प्रतीक बन गई। सदियों से चली आ रही परम्परागत पद्धति पर जीवनयापन करने वाली स्त्री के जीवन में स्वतन्त्रता के पश्चात् कई बड़े परिवर्तन आये। आज हम देखते हैं कि नई चेतना व शिक्षा के कारण स्त्रियों का विद्रोही स्वर उभर रहा है।

आंचलिक उपन्यासकारों ने स्त्री जीवन में इन सूक्ष्म चेतनाओं को पहचाना और अपने उपन्यासों में इसे दिखाने का प्रयत्न किया। सर्वप्रथम हम फणीश्वरनाथ रेणु के मैला आंचल को देंखे तो उसमें हमें दो प्रमुख स्त्री चरित्र देखने को मिलते है– कमली और लक्ष्मी। कमली तहसीलदार की बेटी है, डॉ0 प्रशान्त कुमार से उसका प्रेम संबंध स्थापित होता है। इसी प्रेम सम्बन्ध के कारण उसके चरित्र के कुछ महत्वपूर्ण पहलू सामने आते हैं। कमली स्वभाव से अत्यन्त संवेदनशील है, साथ ही वह प्रबुद्ध भी है। डॉ0 प्रशान्त की प्रतीक्षा में वह साहित्य का गहरा अध्ययन करती है तथा उससे वह अपने आप को जोड़कर भी देखती है। कमली उन भारतीय स्त्रियों के लिए प्रतिनिधि चरित्र है जो प्रेम में अपना सबकुछ लुटा देती हैं। वह डॉ0 प्रशान्त से इतना प्रेम करती है कि उसे कुंवारी मां बनने का भी कोई डर नहीं होता है। कमली को जितनी संवेदना रेणु जी ने दी है उतनी संवेदना दुखो की मारी लक्ष्मी को भी दी है। लक्ष्मी वह अबोध बालिका है जो मठ पर पालने पोसने व पढ़ाने लिखाने के लिए महंत सेवादास द्वारा लाई जाती है। महन्त ने उसके किशोरावस्था में पहुंचते ही उसका दैहिक शोषण शुरू कर दिया। महंत द्वारा लक्ष्मी का पालन पोषण करने के कारण वह उससे घृणा भी नहीं कर सकती। लक्ष्मी स्वतन्त्रता सेनानी बालदेव से प्रेम करती है। वह सामाजिक रूढ़ियों व बन्धनों की परवाह न करते हुए बालदेव के साथ रहने लगती है। इस उपन्यास में लक्ष्मी के शोषण द्वारा रेणु ने भारतीय समाज में स्त्री की वास्तविकता स्थिति को दिखाने का प्रयास किया है। विशेष रूप से ग्रामीण निर्धन स्त्रियों की। जहां कमली एक संपत्तिशाली व उच्च वर्ग की स्त्री होने के कारण समाज में इज्जत, सम्मान व सुविधायें प्राप्त किये हुए है। वहीं लक्ष्मी दासी के रूप में देखने को मिलती है, जिसे कोई भी महंत अपनी रखेल बना सकता है। हालांकि लक्ष्मी के चरित्र में संवेदनशीलता, दबंगता व समझदारी आदि गुण हैं। कमली व लक्ष्मी के अलावा गणेश की नानी, मंगला जैसे स्त्री चरित्रों को भी रेणु ने बड़ी ही संवेदनशीलता के साथ अपने उपन्यास में चित्रित किया है।

फणीश्वरनाथ रेणु द्वारा ही रचित उपन्यास 'परती परिकथा' की नायिका इरावती लाहौर से दिल्ली और बिहार तक शरणार्थी कैंपों की खाक छानती है। वह दस महीनों के अन्दर तीन

राजनीतिक दलों के साथ सम्बन्ध जोड़ती व तोड़ती है। उसके सशक्त चरित्र के कारण लोग उसके बारे में तरह–तरह की बातें करते है। इरावती का दर्द और बेबसी इन शब्दों द्वारा दिखाई देती है– ''असल में प्यार करने की ताकत मुझमें नहीं है। मेरे प्यार को लकवा मार गया है। दिन–रात इसी चेष्टा में रहती हूं कि मेरा प्यार फिर से पनपे। हजारों औरतों पर बलात्कार होते हुए देखा है ....दिन–रात इस पीड़ा से छटपटाई हूँ और चीखती रही हूँ.....सड़े हुए संतरों की तरह सड़कों पर कटी हुई छातियों को लुढ़कते हुए देखा है। मेरी छाती पर भी दो कटे हुएस्तन रखे हुए हैं बेजान मांस के टुकड़े। इतना सबकुछ देखने और सहने के बाद किसी औरत का दिल दिमाग प्यार करने के काबिल कैसे रह सकता है।''[11]

स्त्री सदा से नागार्जुन के रचना के केन्द्र में रही है। उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा सदैव स्त्री को समाज का सक्रिय व महत्वपूर्ण अंग बनाने का प्रयास किया है। नागार्जुन के उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' में मिथिला के जनजीवन को कथा का आधार बनाया गया है। रतिनाथ की चाची गौरी विधवा ब्राह्मणी है। गौरी पर उसके देवर जयनाथ के द्वारा चरित्रहीनता का आरोप लगाया जाता है। जब गौरी गर्भधारण कर लेती है तो लोग उसका परिहास व बहिष्कार कर देते है। लोग उस असहाय स्त्री के बारे में बोलते हैं– ''उमानाथ की मां पतिता है, भ्रष्टा है, कुलटा है... उससे किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए।''[12] इस उपन्यास में चाची के चरित्र पर लगे दाग को हटाकर उसके ममतामयी वात्सल्य रूप का भारतीय नारी के रूप में चित्रण किया गया है। नागार्जुन द्वारा रचित 'वरूण के बेटे' में मधुरी का चरित्र वात्सल्य और क्रान्ति से भरा है। वह मछुआरे की पुत्री होने के बाद भी पुरूषों से कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करती है। मधुरी द्वारा अपने प्रेमी व पति का त्याग करना ग्रामीण अंचल की स्त्री के लिए अत्यन्त साहस का काम है। मधुरी कहती है– ''जिन्दगी और जहान औरतों के लिए नहीं होते क्या।''[13] इस उपन्यास में मधुरी अपने बारे में न सोचकर समाज के लोगों के लिए काम करती है। उसका चरित्र दूसरों के लिए अपने जीवन को समर्पित करता दिखाई देता है।

सन्दर्भ :–

1. सत्येन्द्र चतुर्वेदी–उदयशंकर भट्ट : व्यक्तित्व, कृतित्व और जीवन दर्शन, पृष्ठ 159
2. डा0 रामदरश मिश्र– जल टूटता हुआ, पृष्ठ –232
3. डा0 राही मासूम रज़ा–आधा गांव, पृष्ठ –110
4. डा0 राही मासूम रज़ा–आधा गांव, पृष्ठ –311
5. रामदरश मिश्र– जल टूटता हुआ, पृष्ठ –144
6. डा0 रामदरश मिश्र– पानी के प्राचीर, पृष्ठ –159
7. उदयशंकर भट्ट – लोक परलोक, पृष्ठ –56
8. राही मासूम रज़ा– आधा गांव, पृष्ठ –118
9. राही मासूम रज़ा– आधा गांव, पृष्ठ –61–62
10. नागार्जुन– बलचनमा, पृष्ठ –60
11. फणीश्वनाथ रेणु, परती परिकता, पृष्ठ –121
12. नागार्जुन–रतिनाथ की चाची, पृष्ठ –47
13. नागार्जुन–वरूण के बेटे, पृष्ठ –79

❐❐❐